P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-2) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

गुप्तकाल में दक्षिण पूर्व एशिया के साथ व्यापार

राजेश कुमार यादव
सहायक प्राध्यापक,
प्राचीन इतिहास विभाग,
राजकीय महाविद्यालय,
हसौर, बाराबंकी,
उ0प्र0, भारत

सारांश

गुप्त सम्राटों ने विशाल साम्राज्य के निर्माण के साथ–साथ आन्तरिक एवं विदेशी व्यापार को भी प्रोत्साहन प्रदान किया। गुप्तकालीन वाणिज्य–व्यापार पर प्रकाश डालने वाले प्रमुख साक्ष्य कालिदास, वराहमिहिर, विशाखदत्त एवं शूद्रक के ग्रन्थ अमरकोश, पुराण, पंचतन्त्र, बृहत्कथाकोश संग्रह, फाहियान, शुंगयुंन, कासमास विवरण इसके अतिरिक्त अन्य समकालीन शासकों के अभिलेखों एवं सिक्कों से भी व्यापार–वाणिज्य की जानकारी प्राप्त होती है। सुदूरपूर्व अथवा दक्षिण–पूर्वी एशिया को 'वृहत्तर भारत' के नाम से सम्बोधित किया गया है। इस विशाल क्षेत्र में ब्रह्मा, थाईलैड, हिन्द–चीन, मलाया, जावा सुमात्रा, बोर्नियो, बालि और सेलिबीज इत्यादि विशाल क्षेत्र में हिन्द और प्रशान्त महासागर के बीच वे द्वीप भी सम्मिलित है जहां भारतीय संस्कृति के अवशेष प्राप्त हुए है। सुदूरपूर्व का प्राचीन इतिहास वास्तव में इसी भारतीय संस्कृति का एक अंग हैं। प्राचीन काल से ही आर्थिक समृद्धि का मुख्य आधार व्यापार –वाणिज्य था। व्यापार का मुख्य उद्देश्य समाज के लिए विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का व्यापार–वाणिज्य करना था।

मुख्य शब्द : गुप्तकाल, अन्तर्राज्यीय व्यापार, दक्षिण–पूर्वी एशिया, वृहत्तर भारत।

प्रस्तावना

गुप्तकाल में अन्तर्राज्यीय व्यापार के साथ ही पूर्वी तथा पश्चिमी समुद्रतटीय बंद्ररगाहों से भारत का श्रीलंका, इंडोनेशिया, मध्य प्रायद्वीप, ईरान, चीन, मिस्र, अलेग्जेंड्रिया आदि देशों से भी व्यापार होता था। मलाया जलडमरूमध्य सुमात्रा को पृथक करता है। इस लिए प्राचीन काल में भारतीय पोतों के समक्ष तीन विकल्प हुआ करते थे या तो वे सुमात्रा के दक्षिण से होकर पूर्व में चम्पा, कम्बुज आदि प्रदेशों से होकर जाते। इसमें लम्बा रास्ता के साथ–साथ समुद्री तूफान की ज्यादा संभावना बनी रहती थी। द्वितीय मार्ग मलक्का जलडमरूमध्य होकर पूर्वी देशों को जाने का था।

तीसरा मार्ग क्रां–के जलसन्धि बंगाल की खाड़ी पर निर्मित अनेक बन्दरगाहों से श्यामदेश की खाड़ी से पहुंचने का था। इसे भारतीय व्यापारी ज्यादा सुरक्षित समझते थे। यहां से माल (सामान) को लादकर चम्पा, कम्बुज, चीन आदि देशों तक ले जाया जाता था।

भारतीय व्यापारियों के बड़े–बड़े जत्थों को लेकर साहसी नाविक पश्चिमी तट के शूर्पारक (सोपारा) तथा भरूकच्छ (भड़ौच) और तट पर बंगाल की खाड़ी के बन्दरगाह ताम्रलिप्ति (तामुलुक) से सुदूरपूर्व के लिए प्रस्थान करते थे।

टॉलमी के अनुसार मलाया प्रायद्वीप और उसके आगे जाने वाले जहाज बंगाल की खाड़ी में स्थित 'पलौरा' नामक बन्दरगाह तक समुद्रतट के किनारे–किनारे जाते थे। यह प्राचीन बन्दरगाह गंजाम जिले के गोपालपुर के निकट है यहां से मलाया की खाड़ी से होते हुए इण्डोनेशिया के विभिन्न टापुओं तथा हिन्द–चीन की ओर प्रस्थान करते थे। इस लम्बी यात्रा को कम करने के लिए दूसरे मार्ग भी थे। यात्री तकुआ–पा– तथा केडा में भी उतर सकते थे। इस क्षेत्र में मिले बहुत से अवशेष इस बात की पुष्टि करते है। भारतीय नाविक गहरे समुद्र की लहरों के थपेड़ो को सहते हुए अपने जहाजों से सुदूरपूर्व जाते थे। पलौरा से वे सीधे मलाया, प्रायद्वीप पहुंच जाते थे। वहां से वे जलमार्ग तथा स्थल मार्ग से अन्य क्षेत्रों की ओर प्रस्थान करते थे।

दक्षिण भारत से भी व्यापारी अंडमान और निकोबार द्वीप के बीच से होकर अथवा निकोबार और सुमात्रा के बीच सामुद्रिक मार्ग से मलाया की ओर जाते थे और वहां से तकुआ–पा अथवा कंडा पहुंचकर उतरते थे। टॉलमी ने 'तकोला' का उल्लेख किया है, जिसकी समानता 'तकुआ–पा' से की जा सकती है। यहां पर 'टिन– का उत्पादन बहुत होता था। यही से दक्षिण की ओर

मलक्का की खाड़ी को पार कर इण्डोनेशिया के द्वीपों एवं पूर्व हिन्द–चीन की ओर प्रस्थान किया जाता था।

दक्षिण भारत से सुदूरपूर्व के लिए 'पेरीप्लस' में 'कमार' (टॉलमी का खबेरिस या कावेरीपट्टनम) पोडुके (पांडिचेरी) तथा सोपात्म नामक तीन बन्दरगाहों का उल्लेख है जो एक दूसरे के निकट थे और वहां से कालंडिया नामक जहाज सुदूरपूर्व के लिए जाते थे।

कम्बुज देश में भारतीय तोल के मापदण्डों का चलन था और वे क्रमशः खरिका, द्रोण, प्रस्थ और कुडव थे। 'कुडव' सबसे छोटा वाट था वह लगभग ढाई सौ ग्राम के बराबर था।

इस प्रकार दक्षिण–पूर्व एशिया में व्यापार के साथ–साथ नये–नये राज्यों का भी प्रार्दुभाव हुआ। भारतीय व्यापारी व्यापार के लिए विदेशों से जहाज किराये पर भी लेते थें चीनी यात्री फाहियान के विवरण से भी इस पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

भारतीय व्यापारी सुदूरपूर्व के उपनिवेशों में अपने देश की पुण्य स्मृति को बनाये रखने के लिए वहां कई केन्द्रों का नाम भारतीय रखा– उदाहरणार्थ – अयोध्या, कौशाम्बी, द्वारावती, मथुरा, चम्पा, कलिंग, कम्बुज तथा गंधार आदि। फाहियान ने गंगा नदी पर स्थित ताम्रलिप्ति बन्दरगाह का उल्लेख किया है जिसके माध्यम से दक्षिण पूर्व एशिया के साथ प्रचुर मात्रा में व्यापार होता था।

कालिदास ने पूर्वी द्वीप समूह को 'द्वीपान्तर' कहा है उनके अनुसार हमारे देश के व्यापारी वहां से मसाले लाते थे–

अनेन सार्घ विहराम्बरार्शे : तीरेवुतालीवनमर्मरेव
दीपन्तरानीतल बंग पुष्पैर पाकृतास्वेदलता मरूदभिः।

एक अन्य मत के अनुसार ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों में वहां आक्रमण के कारण हमारे देश की विशाल जनसंख्या ने मातृभूमि को छोड़कर विदेशों में शरण ली हो। समुद्रगुप्त के द्वारा पराजित राजाओं ने भी दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में शरण ली होगी।

फ्रांसीसी विद्वान कोरूदीज ने भी कहा कि बौद्ध धर्म के उत्थान ने भी उपनिवेशीकरण को प्रोत्साहन दिया। इस धर्म ने जाति प्रथा का तिरस्कार किया जिससे समुद्री यात्रा विशाल मानदण्ड पर संभव हो सकी। इस उपनिवेशिक प्रसार का सबसे बड़ा कारण व्यापारिकप्रलोभन था। परिणामतः भारतीय व्यापारी बहुमूल्य धातुओं के पूर्ति के निमित्व सुवर्णभूमि की ओर उन्मुख होना पड़ा। दक्षिणपूर्व एशियाई देशों के लिए प्राचीन भारतीय साहित्य में ताम्रद्वीप, यवद्वीप, शंखद्वीप, कर्पूरद्वीप तथा नारिकेलद्वीप का उल्लेख किया गया है। ईसा की निकट शताब्दी में भारतवर्ष में नौका–निर्माण के क्षेत्र में प्रगति हुई। इस समय हिन्दमहासागर में ऐसे जहाजों का प्रयोग प्रारम्भ हुआ जिन पर 600 से 700 तक यात्री बैठ सकते थे।

भारतवर्ष एवं चीन के व्यापार सम्बन्ध के उन्नत दशा में भी जलमार्ग से ही भारतीय व्यापारी जलमार्ग के द्वारा चीन जाते थे। जिसका विवरण फाहियान एवं हवेनसांग के यात्राविवरण से प्राप्त होता है। कालिदास के अनुसार भारतवर्ष के व्यापारी चीन से रेशमी वस्त्र लाते थे। 'आभिज्ञानशाकुन्तलम्' में कण्व के आश्रम में हस्तिनापुर जाता हुआ दुष्रूयन्त कहता है "मैं केवल शरीर मात्र से अपनी राजधारी की ओर जा रहा हूँ। मेरी स्थिति इस समय वैसी ही जैसे जलपोत पर लगा चीन का रेशमी वस्त्र वायु की दिशा में फहरा रहा हो।

''गच्छतिपुरः शरीर पश्चात संस्थितत्तेतः
चीन शुकमित्र केतोः प्रातिवातं नीय मानस्य''।

भारत के पश्चिम समुद्रतट से प्रस्थान करने वाले यात्री भृगुकच्छ (भड़ौच) एवं शूर्पारक (सोपारा) होते हुए श्रीलंका तथा वहां से यवद्वीप जावा, एवं श्रीविजय (सुमात्रा का पूर्वी तट) होते हुए चीन जाते थे।

विदेशी विवरण में भी ताम्रलिप्त एवं कावेरी पट्टनम का उल्लेख मिलता है। फाहियान को ताम्रलिप्ति से श्रीलंका पहुंचने में 14 दिन लग गये थे इसके बाद वह श्रीलंका से जावा 90 दिनों की कठिन यात्रा के उपरान्त पहुँचा। तत्कालीन चीनी यात्रियों (फाहियान, हवेनसांग) के तथ्यात्मक विवरणों में भारतीय जनता की आर्थिक समृद्धि के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

फाहियान के अनुसार पांचवी सदी के प्रारम्भ में मध्यवर्ती राज्य के लोग सुखी और सम्पन्न थे। फाहियान ने विशेष रूप से संकाश्य और मगध वासियों की सम्पन्नता का हवाला दिया है। समूचे राज्य में अनेक व्यापारिक श्रेणियों तथा निगम होते थे। पाटलिपुत्र, वैशाली, उज्जयिनी, दशपुर, भड़ौच, आदि इस काल के प्रसिद्ध नगर थे। उस समय भारत का व्यापार अरब, फारस, रोम, चीन, तथा दक्षिणी–पूर्वीएशियाई देशों (सुवर्णद्वीप, सुमात्रा, कम्बुज वियतनाम, चम्पा, आदि) से होता था।

इन देशों में भारतीय वस्तुओं की बड़ी मांग थी– जिसकी प्रमाणिकता उन देशों के साहित्यिक एवं पुरातात्विक साक्ष्यों से प्राप्त होती है। जलीय व्यापार के लिए इस समय बड़े–बड़े जहाजी बेड़े का निर्माण किया जाता था। जावा के बोरोबुदुर स्तूप के ऊपर जहाज के कई चित्र अंकित है। जिससे इस बात की सूचना मिलती है कि भारतीयों के बड़े–बड़े जहाज वहां के बन्दरगाहों में प्रवेश करते थे।

इसके साथ ही साथ भारतीय संस्कृति के प्रचार के लिए भी गुप्तकाल प्रसिद्ध है। यद्यपि गुप्तकाल के पहले भी भारतीयों ने मध्य तथा दक्षिणपूर्वी एशिया के विभिन्न भागों में अपनें उपनिवेश स्थापित कर लिए थे, तथापित इन उपनिवेशों में हिन्दू–संस्कृति का प्रसार विशेषतया गुप्त युग में ही हुआ। फुनान, कम्बुज, मलाया, चम्पा, जावा, सुमात्रा, वाली बोर्नियों, श्याम, वर्मा इस समय के प्रमुख हिन्दू राज्य थे। कालिदास को भी इन द्वीपों का ज्ञान था। इन द्वीपों के शासक अपने को भारतीयों का वंशज मानते थे।

'तन्त्रीकामन्दक' नामक जावानी ग्रन्थ में– ऐश्वर्यपाल नामक सूर्यवंशी राजा अपने को समुद्रगुप्त का वंशज बताता है। प्रयाग प्रशस्ति में सर्वद्वीपवासिभिः का जो उल्लेख हुआ है, इससे तात्पर्य दक्षिण–पूर्वी–एशिया के द्वीपों से ही है। हम कह सकते है। कि इन द्वीपों के शासकों को अपना सार्वभौम सम्राट मान लिया होगा।

निष्कर्ष

गुप्तकाल में अनेक भारतीय धर्म प्रचारक चीन, गये तथा चीनी यात्री फाहियान भी भारत आया। इसके अतिरिक्त भारतीय संस्कृति का प्रचार–प्रसार तिब्बत, जापान कोरिया के साथ–साथ दक्षिणपूर्व–एशियाई देशों, जावा, सुमात्रा, कम्बुज, चम्पा, बाली आदि देशों में भी हुआ। इनके साथ ही इन देशों के साथ व्यापार–वाणिज्य प्रारम्भ हुआ, जिससे उन देशों की समृद्धि का विकास हुआ। इससे स्पष्ट है कि सभ्यता और संस्कृति के प्रत्येक क्षेत्र में गुप्तकाल में अभूतपूर्व प्रगाति हुई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सं0 कश्यप जगदीश, 'जातक' नालन्दा, 1965.

त्रिपाठी शंकर, 'जातक अट्टकथा' पाँच खण्डो में, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

स0 स्पेयर जे0एस0, 'अवदान शतक', 1909.

सूरी सिद्धार्थ, 'उपमति भवप्रपंच कथा' भाग–1, 2, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

शास्त्री राम चन्द्र वर्मा, 'रघुवंश', मनोज पब्लिकेशन नई दिल्ली, 2012.

राजपाल एण्ड सन्स, 'अभिज्ञान शाकुन्तलम', दिल्ली, 2012

वाल्मीकि रामायण, (हिन्दी अनुवाद) गीता प्रेस, 1971.

स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती 'महाभारतम्' आर्य साहित्य भवन।

वेल्स एच0जी0, 'वी मेकिंग ऑफ ग्रेटर इण्डिया', लंदन, 1971.

वर्मा जगमोहन, 'फाहियान यात्रा विवरण', पिलिग्रिम्स पब्लिशिंग लालपुर, वाराणसी सन् 2007.

कोजमास, 'भारतीय बन्दरगाहों की सूची'।

मजूमदार आर0सी0, 'कंबुज लेख', कलकत्ता, 1953.

सरकार वी0 एच0, 'कल्चरल रिलेशन बिटवीन इण्डिया एण्ड साउथ ईस्ट एशिया कन्ट्रीज, नई दिल्ली 1981.

प्रसाद हरि चक्रवर्ती, 'ट्रेड एण्ड कामर्स', कलकत्ता, 1966–67.

मजूमदार चौधरी राय, दि क्लासिकल ऐज' मोती लाल बनारसी दास दिल्ली, 1984.